**ओ३म्**

**“मत-मतान्तरों द्वारा ईश्वर को न मानना व**

**अन्यथा मानने का कारण अविद्या है”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 देश व संसार में दो प्रकार के मत हैं। कुछ व अधिकांश मत संसार में ईश्वर का होना मानते हैं। यह बात अलग है कि सभी आस्तिक मतों में ईश्वर के स्वरूप व गुण, कर्म व स्वभाव को लेकर एक मत नहीं है व उनके विचारों में मान्यताओं में अनेक भेद हैं। दूसरे मत वह हैं कि जो ईश्वर के अस्तित्व को मानते ही नहीं हैं। किसी भी वस्तु या पदार्थ के सत्य ज्ञान के लिए विद्या व ज्ञान का होना आवश्यक होता है। अज्ञानी मनुष्य से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वह किसी वस्तु व पदार्थ के यथार्थ स्वरूप को जान सकता है। जब हम छोटे थे तो सूर्य और चन्द्र को देखकर इनके यथार्थ स्वरूप को वैसा नहीं जानते थे जैसा कि आज जानते हैं। इसी प्रकार से पृथिवी के यथार्थ स्वरूप को भी नहीं जानते थे। आज कुछ पढ़कर कुछ कुछ जानने लगे हैं। कोई मनुष्य इस सृष्टि को पूर्णरूपेण तो जान ही नहीं सकता। मनुष्य अपने से अधिक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों से ज्ञान प्राप्त करता वा सीखता है। जो मनुष्य किसी कारण से ज्ञानियों की संगति नहीं कर पाता वह अज्ञानी रह जाता है उन मनुष्यों की तुलना में जो कि ज्ञानियों की संगति प्राप्त करते हैं। यह भी स्पष्ट जानना आवश्यक है कि ज्ञानी वह नहीं जिन्होंने बड़े बड़े पोथे पढ़े व लिखे हैं, हजारों व लाखों की संख्या में मनुष्यों की सभाओं में धार्मिक व सामाजिक उपदेश आदि करते हैं, ज्ञानी वह है जो पदार्थ के यथार्थ स्वरूप को अपने अध्ययन, अनुभव, विवेक, वेदज्ञान, आप्त प्रमाण व तर्क प्रवृत्ति के द्वारा जानता है। ऐसे मनुष्य संसार में बहुत ही कम है। यदि हम यह कहें कि धर्म विषयक यथार्थ ज्ञान रखने वाले मनुष्य संसार में बहुत ही कम हैं और यदि कुछ हैं तो वह वैदिक धर्मी व आर्यसमाज के विद्वान ही हैं तो इसमें कोई अत्युक्ति व यथार्थ के विरुद्ध कथन नहीं है। हमने प्रायः सभी मतों के सिद्धान्तों व मान्यताओं को पढ़ा व जाना है। उनके आचार्यों के प्रवचनों आदि को भी सुनते हैं। वेद की मान्यताओं, सिद्धान्तों व विचारों को भी हमने जाना है। उसके आधार पर निष्पक्ष होकर हमें यही अनुभव हुआ है कि वैदिक मत ही पूर्णतयः सच्चा मत है जिसका पोषण महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपने जीवनकाल 1825-1883 में किया था। उनकी कृपा से उनके अनुयायी वैदिक धर्मी आज ईश्वर, जीव, प्रकृति सहित धर्म के यथार्थस्वरूप को जानते व समझते हैं। सत्यार्थ प्रकाश का अध्ययन इसका प्रमुख कारण है।

आज कुछ समय पूर्व हम अपने एक 75 वर्षीय मित्र के साथ बैठे भिन्न भिन्न विषयों पर चर्चा कर रहे थे। उन्होंने कहा कि वह ईश्वर को नहीं मानते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि मेरा अधिकार है कि ईश्वर या किसी बात को मानू या न मानू। हमने कहा कि आपको यह स्वतन्तत्रता ईश्वर की प्रदान की हुई है। लेकिन परस्पर विरोधी दो बातों में से केवल एक बात ही सत्य होती है और दूसरी असत्य। आपकी बात सत्य है या नहीं इसके लिए आपको अध्ययन व अन्य उपायों से जानना चाहिये। हमने यह अनुभव किया कि एक ही मत के साहित्य को यदि कोई मनुष्य निरन्तर अध्ययन करता है तो वह कभी सत्य ज्ञान को प्राप्त नहीं हो सकता और दिन प्रतिदिन अविद्या के गड्ढ में गिरता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि वह ईश्वर व जीवात्मा विषयक संसार में उपलब्ध प्रमुख सभी साहित्य को पढ़े। और कुछ पढ़े या न पढ़े उसे वेद, उपनिषद, दर्शन, सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि ग्रन्थ तो अवश्य ही पढ़ने चाहिये। जो मनुष्य इन व अन्य ग्रन्थों को महर्षि दयानन्द व ऋषियों की तर्क व विवेचना की दृष्टि से अध्ययन नहीं करेगा वह कभी सत्य को प्राप्त नहीं हो सकता। यही कारण है कि मत-मतान्तरों के लोग अपने मत के सिद्धान्तों व मान्यताओं की रट लगाये रहते हैं और समझते हैं कि वह बहुत बड़े ज्ञानी हैं जबकि परीक्षा करने पर वह निरे अज्ञानी सिद्ध होते हैं। हमें लगता है कि सत्य का युक्ति व प्रमाणों के साथ खण्डन नहीं किया जा सकता और असत्य का युक्ति व प्रमाणपूर्वक मण्डन भी नहीं किया जा सकता। संसार में वेद के ऋषियों द्वारा मान्य सिद्धान्त ही सत्य हैं। ऋषि दयानन्द से पूर्व ईश्वरीय सत्य ज्ञान वेद तो था परन्तु वह संहिता रूप में था, संस्कृत, हिन्दी व अंग्रेजी भाषाओं में वेद मंत्रों के सत्यार्थों के रूप में उपलब्ध नहीं था। ऋषि दयानन्द ने कृपा की। उन्होंने वेदों को प्राप्त कर गहन अध्ययन किया और उनके सत्यार्थ संस्कृत व हिन्दी भाषा में प्रदान किये। उनके बाद उनके शिष्यों ने शेष कार्य को पूरा किया ओर अंग्रेजी व कुछ अन्य भाषाओं में वेदों के भाष्य उपलब्ध कराये। वेदों के सिद्धान्त अकाट्य है। महर्षि दयानन्द जी के बाद ऐसा कोई विद्वान किसी मत व सम्प्रदाय में नहीं हुआ है जिसने वेदों के किसी सत्य सिद्धान्त का खण्डन कर उसे सत्य सिद्ध किया हो। इसके विपरीत महर्षि दयानन्द जी ने प्रायः सभी मत-मतान्तरों के मुख्य मुख्य सिद्धान्तों की चर्चा की है वा उनके असत्य सिद्धान्तों का खण्डन भी किया है। उन मतों की उचित बातों को उन्होंने वेदों में पहले से उपलब्ध होना सूचित किया है और उनकी असत्य मान्यताओं व सिद्धान्तों का खण्डन किया है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि जब तक वेदेतर मत का अनुयायी वेद, उपनिषद, दर्शन, सत्यार्थप्रकाश तथा आर्याभिविनय आदि ग्रन्थों को विवेक व तर्क की दृष्टि से नहीं पढ़ेगा तब तक वह ईश्वर व जीवात्मा विषयक सत्य मान्तयताओं को प्राप्त नहीं हो सकता। इसी को अपनी दृष्टि में रखकर ऋषि दयानन्द जी ने शायद आर्यसमाज का तीसरा नियम ‘वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है’ बनाया है। यह भी ज्ञात होता है कि बिना वेद पढ़े और उन पर आचरण किये किसी मनुष्य का जीवन कदापि सफल नहीं होता। वेद वस्तुतः परमधर्म है। सबको इसका अध्ययन व आचरण करना चाहिये।

महर्षि दयानन्द जी ने एक महत्वपूर्ण कार्य यह किया कि वेद के आधार पर 10 अति महत्वपूर्ण सूत्र प्रदान किये हैं जिसे जानना व मानना प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है। इससे उसे वह लाभ होगा जो मत-मतान्तरों की शिक्षा से नहीं हो सकता। आर्यसमाजी पाठक तो इन नियमों से विदित हैं। अन्यों के लिए हम इसका उल्लेख कर रहे हैं। प्रथम नियम है सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उनका आदि मूल परमेश्वर है। 2- ईश्वर सच्चिदानन्द-स्वरुप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, र्स्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है। 3- वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब मनुष्यों वा आर्यों का परम धर्म है। 4- सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। 5- सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य का विचार करके करने चाहियें। 6- संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। 7- सब से प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिये। 8- अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये। 9- प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिये, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिये। 10- सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

आर्यसमाज के उपर्युक्त नियम आदर्श रूप में मनुष्य जीवन व्यतीत करने के लिए उपयोगी हैं। इसके अतिरिक्त ऋषि दयानन्द ने कर्मकाण्ड के लिए पंचमहायज्ञविधि और संस्कारविधि ग्रन्थों का निर्माण भी किया है। इन महायज्ञों एवं संस्कारों का महत्व भी तर्क की कसौटी पर सिद्ध है। इन सब अध्ययन व कर्मकाण्डों को करके मनुष्य सच्चा ईश्वर विश्वासी व आत्मा का सत्य ज्ञान रखने वाला बनता है। ईश्वर ने सृष्टि क्यों बनाई?, जीवात्मा का जन्म व मरण किन कारणों से होता है, बन्ध और मोक्ष, विद्या व अविद्या, भक्ष्य व अभक्ष्य आदि सभी प्रश्नों का उत्तर भी सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों के स्वाध्याय से मिल जाता है।

जिस प्रकार प्रकाश न हो तो सर्वत्र अन्धकार छा जाता है। इसी प्रकार यदि सत्य व ज्ञान का प्रकाश एवं प्रचार-प्रसार न किया जाये तो सर्वत्र अविद्या व अज्ञान का अन्धकार छा जाता है। धार्मिक व सामाजिक जगत में आज अविद्या का अन्धकार छाया हुआ है इसी कारण मिथ्या मत-मतान्तर फल-फूल रहे हैं। मत-मतान्तरों के कारण ही यह अविद्यान्धकार छाया हुआ है। दूसरा कारण समुचित वेदप्रचार का न होना है और मत-मतान्तरों के द्वारा वेद का पठन पाठन न करना व अपनी बुद्धि, तर्क, युक्ति से धार्मिक सिद्धान्तों को पुष्ट न करना आदि अनेक कारण हैं। मनुष्य जीवन को सफल करने के लिए मनुष्यों को अपनी बुद्धि को सत्यासत्य के निर्णय करने में सक्षम बनाने का प्रयास करना चाहिये। इसके लिए आर्ष पाठविधि से अध्ययन आवश्यक है। इसके साथ अविद्या के नाश के लिए वेद और वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन अत्यावश्यक है। ऋषि दयानन्द और पूर्व के ऐतिहासिक ऋषि व उनके ग्रन्थ विद्या के ग्रन्थ हैं जिनके प्रचार से अविद्या का नाश होता है। ऋषि ग्रन्थों का स्वाध्याय व अध्ययन कर हम अपनी बुद्धि को अज्ञान से रहित व विज्ञान व ज्ञान से युक्त बना सकते हैं। सत्य का निर्णय कर सकते हैं और ईश्वर के सत्य स्वरूप को जान व मानकर मनुष्य जीवन के चार पुरुषार्थ धर्म, अर्थ, कार्म व मोक्ष को प्राप्त कर सकते हैं। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**